International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 6; November 2018; Page No. 63-66

पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारत के नगर एवं नागरिक जीवन का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ0 दुर्गेश कुमार सिंह
प्राचार्य, स्वतंत्र गर्ल्स डिग्री कालेज, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश
प्राचीन काल के अनेक नगर काल चक्र के दौरान अपना आस्तित्व समाप्त कर चुके है। प्राचीन काल में अधिकांशतः नगरों का विकास नदियों के किनारे ही हुआ, क्योंकि नदियों से लोगों को पीने का पानी और यातायात की सुविधा उपलब्ध हो जाती थी। पूर्व मध्यकाल में भी अनेक ऐसे सुव्यवस्थित नगरों का निर्माण हुआ जो उस समय की विकसित संस्कृति का परिचय देते हैं।

मूल शब्द : पूर्व मध्यकाल के नगर, नगर निर्माण की विशेषतायें, नागरिक जीवन, भोजन एवं आहार–विहार, वस्त्राभूषण, मनोरंजन।

प्रस्तावना
भारत में नगरों का आरम्भ कब, कहाँ और कैसे हुआ? इसके बारे में लोगों को जानकारी काफी कम है। सिन्धु घाटी की सभ्यता के नगरों के अतिरिक्त भारत के अन्य प्राचीन नगरों, का विकास कैसे हुआ? इसकी हम सिर्फ कल्पना भर कर सकते है क्योंकि इसकी लिखित जानकारी काफी कम है। जब कई नगर विकसित हो गये और इतिहास लिखा जाने लगा, तभी से प्राचीन नगरों के बारे में हमें विशेष जानकारी मिलती है।

भारत के प्राचीन नगरों की उत्पत्ति एवं विकास के बारे में विशेष जानकारी हमें शिलालेखों, ऐतिहासिक इमारतों, खुदाई से प्राप्त अवशेषों तथा देशी व विदेशी इतिहासकारों द्वारा लिखी गयी, रचनाओं के आधार पर मिलती है। इसी प्रकार पूर्व मध्ययुगीन नगरों का विकास शासन के केन्द्र, सैनिक छावनी, धार्मिक स्थान, पर्यटन स्थल, यातायात कारक, औद्योगिक क्षेत्र, खनिज क्षेत्र बंदरगाह, व्यापारिक केन्द्र तथा शैक्षणिक केन्द्र आदि के मद्देनजर हुआ। भारतीय नगरों की उत्पत्ति कैसै हुई? और कब हुई?, यह जानकारी हासिल करने से पूर्व भारत के विभिन्न प्राकृतिक भागों का निर्माण कैसे हुआ, इन भागों में गांवों का विकास कैसे हुआ तथा गांव कैसे नगरों में परिवर्तित हुए, इन सभी तथ्यों की जानकारी होना आवश्यक है।

शोध का उद्देश्य
प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य पूर्व मध्यकाल में उत्तर भारत के प्रमुख नगर किस व्यवस्था में थे और वहाँ के नागरिकों का सामान्य जीवन किस तरह का था, उनके दैनिक जीवन की लगभग सभी क्रियाकलापों का अध्ययन करना है।

शोध का महत्व
इस शोध का महत्व यह है कि तत्कालीन युग की सामान्य जनता के दैनिक जीवन में घटने वाली प्रतिदिन की घटनायें खान–पान, वस्त्राभूषण, खेल मनोरंजन एवं वर्ग विभाजन आदि सभी प्रकार की क्रियायें किस प्रकार सम्पादित होती थी, इसको वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करना।

शोध प्रविधि
इस शोध पत्र में पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारत के प्रमुख नगरों का चयन कर वहाँ के निवासियों के नागरिक जीवन का यथार्थ वर्णन और विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करने हेतु तथ्यात्मक एवं वर्णनात्मक विधियों का प्रयोग किया है।

विवेचना
1. पूर्व मध्यकाल के प्रमुख नगर
पूर्व मध्यकाल अर्थात् 600ई0 से 1200 ई0 तक के काल में स्थापित प्रमुख नगर निम्नवत् हैं– कन्नौज, थानेश्वर, दिल्ली, कोल (अलीगढ़), बरन (बुलंदशहर), गाजीपुर, हमीरपुर (उ0प्र0), भोपाल, खुजराहों, भांडू (म0प्र0), बयाना (राजस्थान), ग्वालियर, इस्माइल नगर, जबलपुर, थार, रायसेन (म0प्र0), अजमेर, चित्तौड़गण, जैसलमेर, रणथम्भौर, नागौर, जालौर (राजस्थान), सिरसा, रेवाड़ी, गुहाना, कलवल(हरियाणा), मुंगेर(बिहार), देहरादूर(उत्तराखण्ड), गोरखपुर (उ0प्र0), द्वारिका, जूनागढ़, मेहसाना (गुजरात), जम्मो, तंजौर, महाबलीपुरम् (तमिलनाडु), बादामी(कर्नाटक), गुंटू (आंध्रप्रदेश), कपूरथला (पंजाब), त्रिपुरी (म0प्र0), येनूगोंडा(तमिलनाडु), मामल्लपुरम् (तमिलनाडु) आदि इसके अतिरिक्त पूर्व में स्थापित प्रमुख नगरों में नालंदा, उज्जैन, काशी, मदुरै, कांची, पाटलीपुत्र और मथुरा आदि भी प्रमुख नगर थें।

- **कन्नौज :** कन्नौज की महत्ता और समृद्धि और मौखरियों के समय बढ़ी और हर्ष के समय आकाश चूमने लगी थी। उस समय कन्नौज उत्तर भारत का प्रमुख नगर था।
- **नालन्दा :** नालन्दा शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था। इस विश्वविद्यालय में 10 हजार छात्र और 1500 शिक्षक थे।
- **पाटलिपुत्र :** अब यह शासन का केन्द्र नहीं था किन्तु फिर भी इसकी गिनती भारत के प्रमुख नगरों में होती थी।
- **काशी :** यह गाहड़वाल राजाओं की दूसरी राजधानी थी, इस काल में यह धार्मिक स्थल था और कई प्रकार के कारीगर यहाँ रहते थे।
- **दिल्ली :** राजा दिलीप द्वारा बसाई गयी दिल्ली चौहान राजाओं की राजधानी थी और इस काल में यह प्रमुख नगर बन गया था।
- **अजमेर :** अजमेर चौहान राजाओं की राजधानी रही परन्तु बाद में दिल्ली राजधानी बनने से इसका महत्व घट गया था।
- **कांची :** यह पल्लवों की राजधानी थी। बाद में इसका विकास अवरूद्ध हो गया।

- **उज्जैन :** उज्जैन कुछ समय तक प्रतिहार राजाओं की राजधानी के रूप में रहा था। इस काल में यह प्रमुख धार्मिक स्थल बन चुका था।
- **गौड़ :** यह पाल और सेन वंशों की राजधानी और प्रमुख नगर था।
- **चित्तौड़गढ़ :** इस नगर पर मौर्य, प्रतिहार, परमार, सोलंकी और सिसौदिया राजाओं का शासन था।
- **मांडू :** यह नगर मध्यप्रदेश के दक्षिणी पश्चिमी भाग में स्थित है। यह नगर कभी परमारों की राजधनी हुआ करती थी।
- **कालिंजर :** यह भारत का एक प्रमुख नगर था। इसका विकास चंदेल राजाओं के समय हुआ था।
- **थानेश्वर :** थानेश्वर हर्षवर्धन और उसके पूर्वजों की राजधानी थी।
- **वतापी :** पुलकेशिन ने वातापी को अपनी राजधानी बनाया था। इसकी गिनती भारत के प्रमुख नगरों में होती थी।
- **त्रिपुरी :** यह नगर मध्यप्रदेश के जबलपुर के समीप स्थित था। यह कलचुरियों की राजधानी थी।
- **मदुरै :** यह पाण्ड्यों की राजधानी था। इसके समीप कई मन्दिरों का निर्माण हुआ।
- **तन्जौर :** यह चोल राजाओं की राजधानी था। यह कावेरी नदी के तट पर स्थित है।
- **जालौर :** यहाँ प्रतिहार वंश के राजा वत्सराज का शासन था, बाद में परमारों ने भी इस पर शासन किया।
- **मामल्लपुरम् :** यह तमिलनाडु का एक प्रमुख व्यापारिक नगर था।
- **पेनूगोंडा :** यह भी तमिलनाडु का एक व्यापारिक नगर था।
- **धार :** पहले यह नगर परमार राजाओं की राजधानी था। बाद में उन्होंने मण्डु को अपनी राजधानी बनाया।
- **चम्पानेर :** यह नगर गुजरात राज्य की राजधानी था। इसे चावड़ा वंश के मंत्री चम्पा ने बसाया था।
- **सोमनाथ :** यह नगर गुजरात का प्रमुख नगर था। काठियावाड़ में समुद्र तट पर बना हुआ, शिव का मन्दिर उत्तरी भारत में सबसे सम्मानित मन्दिर के रूप में विख्यात था। इस नगर और मन्दिर को 1025 ई0 में महमूद गजनबी ने नष्ट कर दिया था।

हड़प्पा संस्कृति से पहले ही भारत में ग्राम और नगर संस्कृति का विकास प्रारम्भ हो गया था तथा नई और पुरानी जातियाँ, पश्चिमी पंजाब(पाकिस्तान) के विभिन्न क्षेत्रों में प्रसारित होकर ग्राम और नगर की बस्तियों को व्यवस्थित कर रही थी। वैदिक साहित्य से आर्यों के ग्राम और नगर के ऐतिहासिक ज्ञान प्राप्त होता है। पाणिनी के आधार पर पतंजलि ने आर्यों की चार प्रकार की बस्तियों का उल्लेख किया है। ग्राम, क्षेत्र, नगर और संवाह ब्राह्मण, कृषक और पंच व्यास के निवास वाली बस्ती को गाँव (ग्राम) जिस स्थान पर गाय, भैंस आदि का पशुपालन करने वाले लोग रहते थे उसे घोष या क्षेत्र, जिस बृहत्–बस्ती में विभिन्न जातियों के लोग पृथक–पृथक मोहल्ले में रहते थे उसे नगर और इस बस्ती से भी बड़ी बस्ती को संवाह कहा जाता था।

2. नगर निर्माण की विशेषतायें

नगर निर्माण में एक विशेष तकनीक अपनायी जाती थी। जिसके अनुसार नगर की नींव पड़ती थी तथा सड़कें, भवन, उद्यान, नदी, तड़ाग आदि का होना इसमें आवश्यक था। इन नगरों में विभिन्न वर्णों, जातियों और व्यवसाय के लोग रहते थे और नगर के उत्थान में योगदान करते थे। नगर में ही सम्पूर्ण प्रशासन तंत्र रहता था। राजा, अमात्य, सचिव, सेनापति, राज्यपुरूष, राज्य का कार्यकर्त्ता, कवि, पण्डित, आचार्य, पुरोहित, श्रेणी, सार्थवाह, विशिष्ट और समृद्ध नागरिकों के गगनचुंबी भवन और आवास लोगों के आकषर्ण के केन्द्र होते थे।

पुराणों में भी नगरों, भवनों और राज प्रसादों की भव्यता का वर्णन किया गया है। विश्वकर्मा को वास्तुकला का विशेषज्ञ माना गया था। श्रीपुर नामक नगर का निर्माण विश्वकर्मा और मय जैसे शिल्प शास्त्रियों ने किया था। द्वारिका पुरी अपने अनुपम छवि और सुन्दरता के लिए अद्वितीय थी। इसका निर्माण भी विश्वकर्मा ने ही किया था। कुमारगुप्त के अभिलेखों से विदित होता है कि उन्होंने कई नगर बसाये थे और उनका विधि पूर्वक रूपांकन कराया था। गंगाधर प्रस्तर अभिलेख में उल्लेखित है कि गगरा नदी के तट पर एक नगर का निर्माण हुआ था जिसमें वाणी और तड़ाग थे। अनेक मंदिर और देव भवन थे। मंदसौर अभिलेख में वर्णित है कि दो नदियों के निकट दसपुर नगर बसाया गया था। वह नगर प्रासाद मालाओं से अलंकृत और सुसज्जित था, लगता था कि अनेक चित्रों से युक्त विमान मालायें हैं। नगर के गृह (भवन) अधिक उन्नत थे।

बाण के अनुसार महाप्रासादों के नीचे वाले तले में संजवन या चतुःशाल एवं ऊपर के तले में चन्द्र शिलायें बनी रहती थी। कहीं–कहीं बिंटक वेदिकायें और चबूतरें बने थे। उनके उतुंग शिखर दूर से दर्शित होते थे। वे श्वेत गचकारी काम से अलंकृत रहते थे। आपस में सटे हुए उनके अनेक गगनचुम्बी शीर्ष और कलश कैलास शिखर जैसे लगते थे। उनके समीप ही सुन्दरता और शोभा के लिये लटकाये गयी स्वर्ण श्रृंखलायें अपनी अद्भुत छटा बिखेरती थी। प्रासाद की अंतः भाग की छतों पर मोतियों के झुमर लटकते रहते थे तथा मण्डपों में मुक्ताजाल टंगे रहते थे।

दसवीं सदी के `लेखक सोमदेव ने भी ऐसे सुसज्जित प्रासादों का वर्णन किया है। उनके द्वारा वर्णित त्रिभुवन तिलक नामक प्रासाद श्वेत संगमरमर से बना हुआ था तथा उसके शिखरों पर स्वर्ण कलश शोभायमान थे। पूरे प्रासाद पर चूने से पुताई की गयी थी। रत्न जटित वाले ऊँचें–ऊँचें ताखों के कारण राज भवन की शोभा कुबेर पुरी की तरह थी। उन स्तम्भों पर मुक्ताफल की लम्बी–लम्बी मालायें लटकती रहती थी। उनपर प्रवाल मणि और दिव्य हुकुल भी अंकित थे। ऊपर की भुजाओं में लगी मकरत मणि अपनी नीली प्रभा बिखेरती थी।

सोमदेव ने ऐसे अनेक पृथक–पृथक भवनों का उल्लेख किया है जिन्हें शासक अपने विभिन्न कार्यों के लिये उपयोग में लाते थे। "आस्थन मण्डप " में राजा बैठकर राज–काज देखता था। उसके अनुसार राजा के शयनगार का नाम "सरस्वती विलास कमलाकर था। उसका क्रीड़ाभवन दिग्वलय–विलोक–विलास कहा जाता था। जिस कक्ष में बैठकर वह गज केलि खेलता था वह करि–विनोद–विलोकर–दोहद के नाम से विख्यात था। वह क्रीड़ाभवन (मनुभवन) में बैठकर वर्षा ऋतु का भी आनन्द लिया करता था। रनिवास अथवा अंतःपुर को सोमदेव ने नया नाम दिया है। " मनसिज विलास, हंस निवास तामरस " जो सात खण्डों में बने सबसे ऊपर का भाग होता था। इस कथन से स्पष्ट होता है कि उस युग में सात–सात मंजिलों के भी भवन हुआ करते थे। इस प्रकार के भवनों में कुमकुम रंगें मरकत पराग से तल भाग 'फर्श' तह देकर अधखिले मालती के फूलों से रंगोली रची जाती थी।

3. नागरिक जीवन

नगर के प्रासाद और भवन ही ऐश्वर्यशाली नहीं होते थे बल्कि कतिपय् नागरिक भी ऐश्वर्यशाली होते थे। उनका रहन–सहन और चाल–चलन अत्यंत विलासमय और वैभव सम्पन्न होता था। ऐसा

नागरिक प्रातःकालीन कृत्यों से निवृत्त होकर अपने नेत्रों में अंजन लगाता तथा सुगंधित वस्त्र पहनता था। वह पुष्प माला धारण करता था और पान खाता था। वह नित्य शरीर की सफाई एवं मालिश कराता था तथा स्नान करता था। चौथा दिन वह अपनी दाढ़ी बनाता और दसवें दिन सिर से बाल कटवाता था। वह अपने केशों को सुगन्धित तेलों से वासित करता था। दो बार भोजन करता था तदन्तर विश्राम या मनोरंजन करता था। वह नित्य के होने वाले सामाजिक व धार्मिक समारोहों में सम्मिलित होता था। इस प्रकार के अनेक समारोह थे। इसमें नागरिक सउत्साह शामिल होकर जीवन को सार्थक बनाते थे।

इसके विपरीत साधारण नागरिकों का जीवन साधारण और सादा होता था। वे साधु और कर्तव्य परायण प्रवृत्ति के होते थे। विलासिता और विषय प्रियता से उनका कोई सम्बन्ध नहीं होता था। वे अपनी भार्या के प्रति उत्तरदायी और सत्यनिष्ठ होते थे। यद्यपि ये लोग सामाजिक व धार्मिक समारोहों में शामिल होते थे किन्तु उनके अवगुणों से दूर रहते थे।

4. पूर्व मध्ययुग में भोजन एवं आहार–विहार

पूर्व मध्ययुग में भी खान–पान की प्राचीन परम्परा चल रही थी। अरब यात्री सुलेमान का कथन है कि भारतीयों में चावल अधिक प्रचलित था। गेहूँ नहीं के बराबर। यहाँ घोषाक ने 'वैजयन्ती' को उदधृत करते हुए यह समीक्षा की है कि मलेच्छों को गेहूँ भोजन के रूप में उपयुक्त था। उत्तरभारत में लक्ष्मीधर के कथनों से प्रमाणित है कि त्योहारों में गोधूर्म (गेहूँ) लक्ष्मीधर और चन्द्रेश्वर ने जन्माष्टमी के अवसर पर गेहूँ के बने पदार्थों के उपयोग की व्यवस्था की है एवं चन्द्र ने मिष्ठान में गेहूँ के उपयोग की बात कहीं है। उसने अनेक प्रकार की मिठाईयों का वर्णन किया है। जिसमें विभिन्न प्रकार अपूय(पूये), मोदक, गुणधामार, हविरन(हलुआ), पावसन्न(खीर), पलल(तिलकुट), मधु, गुण आदि प्रमुख हैं। गेहूँ और चने को भूनकर चूर्ण बनाया जाता था जिसे सत्तू कहा जाता था। प्रायः लम्बा और उज्ज्वल चावल व्यवहार में लाया जाता था। भक्त (भात), सूप(दाल), शष्कुली(पुड़ी), समिधर लोई के आटे की लस्सी, यवामु, मोदक(लड्डू), पलान्न, खाड्य, रसाल(शिखरणी), अमिका, जम्बन्न, अवदंश, उपदंश(सब्जी), सर्पिस्तान(घी में तले पदार्थ), अंगापाचित(अंगारों पर पकाये गये पदार्थ), दहना परिलुत (दही में डूबे पदार्थ), पससा विशुष्क(सूखी सब्जी), षर्षट(पापड़) आदि व्यंजन बनाते थे। एक व्यंजन वह था जो चावल के धोवन में चिंचा, दही मट्ठा और चीनी, इलायची का चूर्ण तथा अदरख का रस मिलाकर और हींग छोंककर लगाकर बनाया जाता था।

तत्कालीन हिन्दू समाज में अत्यंत पवित्रता, शुद्धता एवं संयम पूर्वक भोजन किया जाता था। अलबरूनी और आपस्तम्भ के अनुसार भोजन का स्थान स्वच्छ और गोबर से लिपा हुआ होता था। चीनी यात्री श्वान चांग ने भी इस से लिपा हुआ होता था। चीनी यात्री श्वान चांग ने भी इस से लिपा हुआ होता था। चीनी यात्री श्वान चांग ने भी इस कथन का समर्थन करते हुए लिखा है कि भोजन से पूर्व लोग अपने हाथ, पैर, मुहँ धोते थे। मिट्टी के बर्तनों में भोजन के बाद उसे फेंक दिया जाता था। धातु के बर्तनों को साफ किया जाता था। इत्सिंग ने भी इसी प्रकार का मत भोजन विधि के सम्बन्ध में दिया है।

उत्तर भारत में पूर्व मध्ययुग में भी सामिष आहारियों की अधिक संख्या थी। मांस के लिए पशुओं का वध और शिकार किया जाता था किन्तु ब्राह्मणों के लिए इसका निषेध था। अलबरूनी के अनुसार ब्राह्मणों को छोड़कर अन्य सभी वर्णों के लोग मांस खाते थे। अरब लेखक सूलेमान ने भी लोगों के मांसाहारी होने का उल्लेख किया है। अलबरूनी के अनुसार भेड़, बकरे, मृग, खरगोश, गैण्डे, भैंस, मछली, पानी में रहने वाले जीव, पक्षियों में गोरैय्या, तीतर, मोर आदि के मांस खाने का प्रचलन था। इसके अतिरिक्त गाय, घोड़ा, खच्चर, गधा, ऊँट, हाथी, पालतू जानवर, कुक्कुट, कौआ, तोता, बुलबुल आदि के मांस खाना निषेध होता था।

मदिरा पान का चलन समाज में अत्यंत प्राचीन काल से रहा है। सोमदेव के अनुसार तीनों उच्च वर्णों के लोगों को सुरा का सेवन निषेध है। सोमदेव ने हवाजिन अथवा हवज जाति का उल्लेख किया है। स्मृतिकारों के अनुसार इसी हवज जाति के लोग सुरों का विक्रय करते थे। पुराणों के अनुसार मदिरा दस प्रकार की होती थी किन्तु यह ब्राह्मणों के लिये सर्वथा निषेध थी किन्तु क्षत्रिय और वैश्य के लिए स्वीकृत थी। श्वान चांग के अनुसार क्षेत्रिय ईख और अंगुर से मदिरा तैयार की जाती थी। उनमें गौड़ी, माधवी, मैरे, आतव, मधु आदि अनेक प्रकार के नाम प्रसिद्ध थे। विवाहोत्सव पर लोग मदिरा पान कर अपना रंजन करते थे। यथा सरित सागर और राजतरंगिणी के अनुसार प्रायः व्यापारी मदिरा के आदि होते थे। सौराष्ट्र के लोग मठ्ठा पीते थे।

5. वस्त्राभूषण

पूर्व मध्यकाल में अनेक प्रकार के वस्त्रों का प्रचलन था। श्वानचांग के अनुसार स्त्रियां एक लम्बा वस्त्र धारण करती थी। उष्णीय (पहाड़ी), अधोवस्त्र(धोती), प्रवास(दुशाला), कम्बल, कोपीन(लगोटी), वासस(राजसी वस्त्र) आदि विभिन्न परिधानों का वर्णन भी उसने किया है। कश्मीर के कुछ लोग पटुए का बना वस्त्र पहनते थे। अलबरूनी के अनुसार भारतीय समाज में अधोवस्त्र(धोती), उत्तरीय कुर्तक(कुर्ता), उष्णीय(पगड़ी), धोती, साड़ी और शाल के साथ–साथ पायजामा भी धारण किया जाता था। स्त्रियाँ कुर्तकी (बांहों वाली छोटी कमीज), साड़ी और उत्तरीय धारण करती थी। अलबरूनी के अनुसार उपानत अथवा जूता पहनने का रिवाज भी उस समय के समाज में प्रचलित था। पैर में प्रायः पादुका(जूती) पहनी जाती थी।

सोमदेव ने यशस्तिलक में नर–नारी के विभिन्न आभूषणों का विशद् विवरण दिया है। शीश के आभूषणों में विरीट, मौलि, पट्ट, मुकुट और कोटीर विशेष रूप से प्रसिद्ध थे। कान के अलंकरणों में अवतल, कर्णफूल, कर्णिका, कर्णोत्पल और कुण्डल अधिक पहने जाते थे। कण्ठ के आभूषणों में एकावली, कोष्ठिकाल्य, हारपष्टि, मौक्तिक आदि का विशेष प्रयोग किया जाता था। हाथ में अंगद, केयूर, कंगन, वलय आदि और अंगुलियों में उर्मिला और अंगुलियक पहना जाता था। कमर में कांची, मेखला, रहाना, कर्धर, मालिका और पैरों में जंजीर, हिजीरक, नुपुर, तुलाकोटि और टंसक आदि आभूषण पहने जाते थे। हेमचन्द्र, अरब यात्री अलबरूनी, अरल लेखक सुलेमान और अबूजैद, कल्हण व बाण आदि ने भी इन आभूषणों के प्रयोग का उल्लेख किया है।

6. मनोरंजन

सातवीं सदी के समाज में अनेक प्रकार के खेल, संगीत, नृत्य, वाद्य, जुआ, नाटक आदि प्रचलित थे। निषाद, हषभ, गांधार, षड़ज, मध्यक चौवत और पंचम् ये सात स्वर थे। सोमदेव ने 23 प्रकार के वाद्ययन्त्रों का विवरण दिया है जिनमें शंख, काल्ला, दुदुंभि, पुष्कर, ढक्का, पवाव, मृदंग, भैरों, पट्ट, आनक, भभ्भ, ताल, करटा, त्रिविला, ढकसक, रूजा, गंटा,वेणु, वीणा, झल्लारी, बल्लकी और डिण्डिम थे। अलबरूनी, याकूबी और मसूदी जैसे अरब लेखकों में शतरंज के खेल का भी वर्णन किया है। कुश्ती और मल्ल युद्ध, अभिनय और रंगपूजा का भी आयोजन किया जाता था।

पूर्व मध्ययुग में संगीत–शाला, नाटकशाला, मल्लयुद्ध, चित्रशाला

आदि होते थे। जहाँ लोग अपनी रूचि के अनुसार प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते थे। सरिताओं और सरोवरों में भी लोग जल–क्रीड़ा करते थे। इस प्रकार वे इन क्रियाओं द्वारा अपने को सदा स्वस्थ और स्फुर्तिपूर्ण बनाये रखते थे। समाज के ऐसे आयोजनों में अभिजात और धनिक वर्ग के अतिरिक्त साधारण जनता भी सम्मिलित होती थी।

निष्कर्ष

प्राचीन काल एवं पूर्व मध्यकाल के अनेक नगर कालचक्र के दौरान अपना आस्तित्व समाप्त कर चुके हैं। इसका सबसे बड़ा उदाहरण सिन्धु घाटी की सभ्यता के नगर हैं। कुछ नगर बार–बार बसे और उजड़ गये। इसका सबसे बड़ा उदाहरण दिल्ली है। प्राचीन एवं पूर्व मध्यकाल में अधिकांशतः नगरों का विकास नदियों के किनारे ही हुआ क्योंकि नदियों से लोगों को पीने का पानी और यातायात की सुविधा उपलब्ध हो जाती थी। इसप्रकार हम देखते है कि उस काल में ऐसे सुव्यवस्थित नगरों का निर्माण हुआ, जो उस समय की विकसित सांस्कृति का परिचय देते है। हम देखते है कि नगरों के विकास से धीरे–धीरे समाज का रूप सुसंगठित ढ़ांचे में बदला और शासन व्यवस्था भी आरम्भ हुई। राजाओं और शासकों द्वारा विभिन्न नगरों को अपनी राजधानी बनाने के कारण उनका व्यापक विकास हुआ।

सन्दर्भ सूचि

1. महाभाष्य, 7.3, 14
2. महाभारत सभापर्व 57.3
3. कादाम्बरी अनुच्छेद 85
4. मालविकाग्निमित्र, पृष्ठ 49
5. एपिग्राफी इण्डिया, 9.57
6. मानसोल्लास, 3,15,78, 79
7. मनुस्मृति, 2.56
8. ग्यारहवीं सदी का भारत, पृ0 233
9. राजतरंगिणी, 5.119, 7.149
10. यशस्तिलक, उत्तराद्ध, 127, 128
11. देशी नाम माला, 7.44, 8.39
12. मोहराज पराजय, अंक 4, पृ0 37
13. इण्डियन एपीग्राफी, 8.53, 12.201
14. गृहस्थ रत्नाकर, पृ0 394
15. नीमलम् पुराण, श्लोक 450, 53
16. अभियान चिंतामणिए श्लोक 556
17. विक्रमांक देव चरित, 12.50.78